R.N.I. No. : DELBIL / 2001/4685 Postal regn. No. : A.L.G. / 29 / 2018-20

मूल्य-4 रुपये, वर्ष-19, अङ्क-11 नवम्बर 2019 1

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, अलीगढ़ (उ०प्र०) का
मासिक मुख समाचार पत्र

मङ्गलायतन

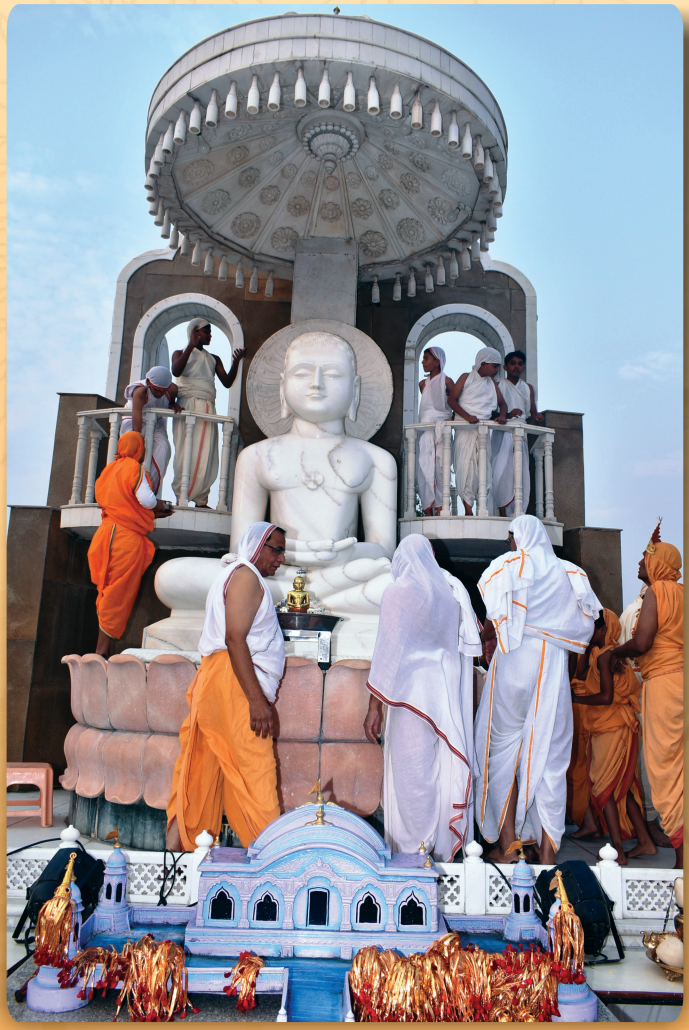

तीर्थधाम मङ्गलायतन में
भगवान महावीर निर्वाण महोत्सव एवं
आध्यात्मिक शिक्षण शिविर की झलकियाँ

मङ्गलायतन

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, अलीगढ़ (उ.प्र.) का

मासिक मुखपत्र

वर्ष-19, अङ्क-11 (वी.नि.सं. 2546; वि.सं. 2076) नवम्बर 2019

श्री मुनि राजत समता संग.....

श्री मुनि राजत समता संग,
कायोत्सर्ग समाहित अंग ॥टेक ॥

करतैं नहिं कछु कारज तातैं,
आलम्बित भुज कीन अभंग।
गमन काज कछु हू नहिं तातैं,
गति तजि छाके निज रस रंग ॥2 ॥

लोचनतैं लखिवौ कछु नाहीं,
तातैं नाशादृग अचलंग।
सुनिवे जोग रह्यो कछु नाहीं,
तातैं प्राप्त इकन्त सुचंग ॥2 ॥

तह मध्यान्ह माहिं निज ऊपर,
आयो उग्र प्रताप पतंग।
कैधौं ज्ञान पवन बल प्रज्वलित
ध्यानानल सों उछलि फुल्लिंग ॥3 ॥

चित्त निराकुल अतुल उठत जहँ,
परमानन्द पियूष तरंग,
'भागचन्द' ऐसे श्री गुरुपद,
वन्दत मिलत स्वपद उत्तंग ॥4 ॥

साभार : मंगल भक्ति सुमन

संस्थापक सम्पादक
स्व. पण्डित कैलाशचन्द्र जैन, अलीगढ़
मुख्य सलाहकार
श्री बिजेन्द्रकुमार जैन, अलीगढ़
सम्पादक
डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, मङ्गलायतन
सह सम्पादक
पण्डित सुधीर जैन शास्त्री, मङ्गलायतन
सम्पादक मण्डल
ब्रह्मचारी पण्डित ब्रजलाल शाह, वढ़वाण
बाल ब्रह्मचारी हेमन्तभाई गाँधी, सोनगढ़
डॉ. राकेश जैन शास्त्री, नागपुर
श्रीमती बीना जैन, देहरादून
सम्पादकीय सलाहकार
पण्डित रतनचन्द भारिल्ल, जयपुर
पण्डित विमलदादा झाँझरी, उज्जैन
श्री चिरंजीलाल जैन, भावनगर
श्री प्रवीणचन्द्र पी. वोरा, देवलाली
श्री वसन्तभाई एम. दोशी, मुम्बई
श्री श्रेयस् पी. राजा, नैरोबी
श्री विजेन वी. शाह, लन्दन
मार्गदर्शन
डॉ. किरीटभाई गोसलिया, अमेरिका
पण्डित अशोक लुहाड़िया, अलीगढ़

इस अङ्क के प्रकाशन में सहयोग-
स्व० श्री शीतलप्रसाद शकुन्तलादेवी जैन
C/o. आजाद ट्रेडिंग कम्पनी
जैन मन्दिर के नीचे,
लाल कुँआ,
बुलन्दशहर-203001

शुल्क :
वार्षिक : 50.00 रुपये
एक प्रति : 04.00 रुपये

क्या - कहाँ

सर्व उपदेश का संक्षिप्त सार	5
प्रथम प्रवचन	9
वीतरागी-विज्ञान में ज्ञात होता	17
भूतार्थस्वभाव के आश्रय.....	19
मोक्षतत्त्व का साधन (4)	22
आचार्यदेव परिचय शृंखला	25
प्रेरक-प्रसंग	26
समाचार-दर्शन	28

सर्व उपदेश का संक्षिप्त सार

[स्वतत्त्व को प्रमेय करने की प्रेरणा]

जीव जुदा पुद्गल जुदा यही तत्त्व का सार;
अन्य कछू व्याख्यान जो, याही का विस्तार।

श्री पूज्यपादस्वामी इष्टोपदेश की ५०वीं गाथा में सर्व शास्त्रों का संक्षिप्त रहस्य बतलाते हुए कहते हैं कि—जीव और पुद्गल की भिन्नता जानकर स्वतत्त्व का ग्रहण करना ही सर्व तत्त्व का सार है और अन्य जो भी उपदेश है, वह सब इसी का विस्तार है। जीव-पुद्गल को भिन्न जानकर स्वतत्त्व को किस प्रकार प्रमेय करना तथा स्वतत्त्व को प्रमेय करने से अन्तर में क्या होता है ? उसका अति सरस वर्णन पूज्य स्वामीजी ने इस प्रवचन में किया है।

जीव-पुद्गल की भिन्नता जानकर रागादि से पार ऐसे शुद्ध आत्मा को अनुभव में लेना ही सर्व शास्त्रों का सार है। ज्ञानस्वभावी आत्मा में प्रमेयत्व स्वभाव भी है, इसलिए ज्ञान को अन्तर्मुख करने से वह प्रमेय होता है।

कोई पूछे कि - आत्मा जानने में आ सकता है ?

तो कहते हैं कि-हाँ; क्योंकि आत्मा में प्रमेय होने का अर्थात् ज्ञान में ज्ञात होने का स्वभाव है और जानने का भी उसका स्वभाव है। इस प्रकार आत्मा स्वयं अपने को जान सकता है।

आत्मा का सत्पना-सत्यपना शरीरादि से भिन्न है, रागादि से भी सत्स्वभाव पृथक् है; आत्मा तो ज्ञान-आनन्द स्वभावी है। उसमें अनन्त गुणों का समावेश होता है। ऐसे गुणवान आत्मा में उपयोग को एकाग्र करके निवास करना, सो निजगृह में जाना वास्तु-प्रवेश है। अनन्त गुणमय जो भूतार्थ स्वभाव, वह आत्मा का निजगृह है। स्व को प्रमेय करके आत्मा कभी निजगृह में नहीं आया, बाह्य में देखता रहा है।

भाई, तू शरीर को देखने का प्रयत्न करता है परन्तु उससे तो तू पृथक् है।

बाह्य पदार्थों को देखने के लिये अनन्त काल से प्रयत्न कर रहा है परन्तु उनसे पृथक् अन्तर में तू कौन है–ऐसा देखने का प्रयत्न कभी किया है ?..... अपने स्वज्ञेय को जान ले तो तुझे सम्पूर्ण भगवान आत्मा का निर्णय एवं ग्रहण होगा... तेरे ज्ञान में भगवान आत्मा परिपूर्ण आ जायेगा।—इसी से सर्व शास्त्रों का सार आ जाता है।

शरीर से तथा राग से भिन्न कोई चैतन्यस्वरूप तुझमें है, उसे तू देख! स्वज्ञेय को जाने बिना तुझे सम्यग्ज्ञान नहीं होगा। पुद्गल भिन्न है, रागादि भी भिन्न है, शेष जो अनन्त गुण सम्पन्न चैतन्य, सो मैं हूँ—ऐसा निर्णय होने पर, पर से पृथक् करके चैतन्य का ग्रहण होता है। ऐसा चैतन्य गृह तेरा घर है! अन्य जो पुद्गल गृह हैं, वे तेरे घर नहीं हैं। स्व–गृह को जानकर उसमें निवास कर।—इस प्रकार निजगृह बतलाकर सन्त उसमें निवास कराते हैं।

आत्मा और उसके अनन्त गुण–वे सब अन्तर्मुख उपयोग द्वारा ज्ञान में प्रमेय हों, ऐसे हैं; तथापि ऐसा कहना कि 'मेरा आत्मा मुझे ज्ञात नहीं होता'—तो उसमें प्रमेय स्वभावी आत्मा का तथा उसके अनन्त गुणों का निषेध होता है।

भाई, सन्त तुझे तेरा आत्मा पर से पृथक् करके बतलाते हैं कि ऐसा तेरा आत्मा है! तो उसे स्व–पर के विभाग करके पृथक् लक्ष्य में ले। वह तेरे स्वसंवेदन में ज्ञात होगा।

जो स्व–पर के भिन्नत्व को जाने, उसका लक्ष्य आत्मा पर जाता है। जिस प्रकार काँच के टुकड़ों में मूल्यवान हीरा पड़ा हो, और कोई जौहरी उसे भिन्न करके बतलाये कि—देखो, यह काँच के टुकड़े हैं और यह हीरा है... तो वहाँ दोनों को पृथक् जाननेवाले की दृष्टि कहाँ स्थिर होगी ?—हीरे पर उसकी दृष्टि जायेगी और काँच के टुकड़ों को हेय मानने लगेगा।

उसी प्रकार काँच के टुकड़े समान जड़ शरीर एवं रागादि भावों के बीच यह चैतन्य हीरा पड़ा है। सन्त अलग–अलग करके बतलाते हैं कि—यह शरीरादि जड़–पुद्गल तथा यह रागादि परभाव तू नहीं है; तू तो उन सबसे भिन्न लक्षणवाला नित्य चैतन्य–प्रकाश से जगमगाता चैतन्यहीरा है;—इस

प्रकार दोनों की भिन्नता जानने पर जाननेवाले की दृष्टि कहाँ स्थिर होगी ?— वह रागादि या शरीरादि के प्रति झुकेगा अथवा चैतन्यरत्न पर उसकी दृष्टि जायेगी ? उसकी दृष्टि पुद्गल शरीर एवं रागादि से हटकर अपने अचिन्त्य चैतन्यरत्न पर ही लगेगी।—इस प्रकार ज्ञानी स्वसंवेदन से स्वतत्त्व को ग्रहण करता है।

—ऐसा ग्रहण करके आत्मा को स्वज्ञेय बनाने से उसमें अतीन्द्रिय आनन्द, प्रभुता, सर्वज्ञता आदि स्वभावों का भी ग्रहण होता है; वे भी साथ में स्वज्ञेयरूप से ज्ञात होते हैं और वहाँ रागादिभाव अपने में अभूतार्थरूप से ज्ञात होते हैं। (इस प्रकार व्यवहार अभूतार्थ है; वह व्यवहार उस काल जानने में आता है, परन्तु ज्ञानी स्वज्ञेय में उसका ग्रहण नहीं करते; स्वज्ञेयरूप से तो शुद्ध आत्मा को ही लेते हैं और विभावों को स्वज्ञेय से बाहर रखते हैं।)

देहादि से तथा रागादि से भिन्न ऐसे चैतन्यवस्तु को जहाँ स्वज्ञेय बनाया, वहाँ उसके अनन्त गुण अपने-अपने स्वकार्य सहित ज्ञान में ज्ञात हो जाते हैं; भूतार्थ स्वभाव की दृष्टि में आत्मा के समस्त धर्म स्वसंवेदन में व्यक्त होते हैं। अहा, ऐसा महान स्वज्ञेय! उसे भूलकर आत्मा परज्ञेय के जानने में भटकता है। भाई, जो पदार्थ तुझसे पृथक् हैं, उनकी ओर देखने से तुझे क्या लाभ है ? अनन्त गुणों का भण्डार जिसमें भरा है, ऐसे आपने में ही तू देख! अपने आत्मा को स्वज्ञेयरूप से जानकर उसमें तन्मय होने से तुझमें विद्यमान अनन्त गुण तुझे प्रमेयरूप से ज्ञात होंगे और उन सब गुणों का निर्मल कार्य प्रगट होगा। स्वज्ञेय में अतीन्द्रिय आनन्द साथ आयेगा, श्रद्धा साथ आयेगी, प्रभुता साथ आयेगी, विभुता का वैभव साथ आयेगा—इस प्रकार सम्पूर्णरूप से भगवान आत्मा का ग्रहण होगा।

अरे वीर! अरे धीर!! शान्त होकर, शान्तभाव से अन्तर में अपने आत्मा को देख। धी अर्थात् बुद्धि ज्ञान, उसे जो अन्तर में प्रेरित करे, वह धीर है। बुद्धि को बाह्य में ही लगाये रहे और स्वज्ञेय को जानने में न ले जाये तो उस बुद्धि को वास्तव में बुद्धि नहीं कहते परन्तु कुबुद्धि कहते हैं। सुबुद्धि तो उसे कहते हैं कि जो अन्तर में स्व-पर को भिन्न करके, अपने आत्मा को ज्ञान में ग्रहण करे।

ज्ञानी सम्पूर्ण आत्मा को स्वज्ञेय में ग्रहण करते हैं और पर के अंशमात्र को ग्रहण नहीं करते।—इस प्रकार भेदज्ञान द्वारा स्व का ग्रहण, वह सर्व शास्त्रों का सार है। सन्तों ने विस्तार करके जो समझाया, वह सब इसी का विस्तार है। दो तत्त्वों को भिन्न कहने से दोनों के कार्य भी भिन्न ही हैं—यह बात उसमें आ जाती है।

आत्मा ज्ञात नहीं होता–तो क्या आत्मा में प्रमेय स्वभाव नहीं है ? प्रमेय स्वभावी आत्मा स्वयं अपने को स्वसंवेदनज्ञान से साक्षात् जानता है। पुद्गल से आत्मा भिन्न है, इस बात को पुद्गल भले ही न जाने परन्तु तू उसे जानकर अपने चैतन्यस्वरूप आत्मा की ओर उन्मुख हो... और उस निजगृह में निवास कर। ऐसे आत्मा को जहाँ स्वज्ञेयरूप से लक्ष्य में लिया, वहाँ सम्पूर्णरूप से (अर्थात् आनन्द प्रतीति आदि सर्व गुणोंसहित) आत्मा का ग्रहण हुआ। इस सर्वज्ञस्वभावी आत्मा को स्वज्ञेय बनाने से अब सर्वज्ञता ही होगी... इस सम्बन्ध में ज्ञानी निःशंक हैं। अनन्त गुणसहित आत्मा का जो सम्पूर्णरूप, उसे ज्ञानी ने ग्रहण किया, वहाँ अपना सर्व आत्माओं का सर्वज्ञस्वभाव उसे श्रद्धा-ज्ञान में आ गया; उनका ज्ञान सर्वज्ञता की ओर दौड़ने लगा... अब अल्प काल में सर्वज्ञता प्रगट हो जायेगी। पर के आधार बिना ही प्रभुता प्रगट होती है; स्वाधीनरूप से सर्वज्ञता प्रगट होती है—ऐसे स्वभाव को तू प्रतीति में ले तो उसमें सर्वज्ञशास्त्रों का सार समा जाता है। अहो, जिस ज्ञान ने अन्तरोन्मुख होकर आत्मा को स्वज्ञेय बनाया, उसने अनन्त गुण के कार्यसहित सम्पूर्ण आत्मा का ग्रहण किया... उसकी परिणति धारावाहीरूप से केवलज्ञान की ओर चल पड़ी।

संक्षेप में, स्व-पर की भिन्न को जानकर स्व-द्रव्य का ग्रहण करना, वह सर्व तत्त्व का सार है। पश्चात् विस्तार से समझने की रुचिवाले जीवों के लिये जो कुछ विशेष व्याख्यान है, वह सब इसी का विस्तार है और वह भी प्रशंसनीय है। इस प्रकार जीव-पुद्गल का भेदज्ञान करके अपने में तन्मय होकर तू अपने को जान... वह सर्व तत्त्व का सार है।

आत्मधर्म (हिन्दी), वर्ष 24, अंक - 1

श्री समयसार नाटक पर

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामीजी का धारावाही प्रवचन

प्रथम प्रवचन

गतांक से आगे

अनुभव की महिमा

अनुभव चिंतामनि रतन, अनुभव है रसकूप।
अनुभव मारग मोखकौ, अनुभव मोख स्वरूप॥18॥

अर्थः- अनुभव चिन्तामणि रत्न हैं, शान्तिरस का कुआं है, मुक्ति का मार्ग है और मुक्तिस्वरूप है॥18॥

काव्य - 18 पर प्रवचन

अनुभव रतन है रतन! वह शान्तिरस का महा सिन्धु है, मुक्ति का मार्ग भी अनुभव है और अनुभव ही मोक्षस्वरूप है।

अनुभव ही वास्तविक चिन्तामणि रत्न है। पद्मनन्दि में आता है कि चिन्तामणि रत्न और कल्पवृक्ष की बातें सुनी हैं, परन्तु कहीं देखे नहीं; परन्तु हमारे पास तो यह अनुभवरूपी चिन्तामणि रत्न है। इसमें से हमें आनन्द मिलता है। शान्तिरस का कुआँ भी यह अनुभव ही है। मोक्ष का मार्ग भी यह अनुभव ही है। शुभराग है, वह मोक्ष का मार्ग नहीं। मोक्षस्वरूप भी अनुभव ही है।

यहाँ नाटक समयसार में अनुभव का अधिकार काव्य 16 से प्रारम्भ हुआ है। अन्य अनेक बातें तो बनारसीदासजी कहेंगे, परन्तु इस आत्मा के आनन्द का अनुभव धर्म है और वह अनुभव कैसे प्राप्त हो इसके लिए यहाँ यह अनुभव का अधिकार कहा जा रहा है। बनारसीदासजी कहते हैं कि शुद्ध निश्चयनय, शुद्ध व्यवहारनय और मोक्षमार्ग में कारणभूत आत्मानुभव की चर्चा का मैं वर्णन करता हूँ।

आत्मपदार्थ का विचार और ध्यान करने से चित्त को जो शान्ति मिलती है तथा आत्मिकरस का आस्वाद करने से जो आनन्द मिलता है, उसे ही अनुभव कहते हैं। यह अनुभव की व्याख्या हुई।

सम्पूर्ण अनुभव का अधिकार कहना है न ! सार में सार बात यह है। शुद्ध चैतन्यमूर्ति आत्मा का विचार और ध्यान करने पर मन को शान्ति मिलती है और उसका रस चखना अर्थात् शुद्ध चैतन्य का अनुसरण करके आनन्द का स्वाद लेना, उसका नाम अनुभव है।

हम छोटे थे, तब पड़ौसी मामा गाते थे; वह हम सुना करते थे- "अनुभवी को इतना रे, आनन्द में रहना रे, भजना परब्रह्म को, अन्य कुछ न कहना रे... ।"

यहाँ कहते हैं कि आत्मा शक्ति का सत्त्व तत्त्वस्वरूप से परमात्मस्वरूप ही है, सत् चिदानन्दस्वरूप है। सत् यानी शाश्वत्, ज्ञान और आनन्दस्वरूप वस्तु का अनुसरण करके आनन्द के वेदन में आना, उसका नाम अनुभव है।

पुण्य-पाप से रहित सत्चिदानन्द चैतन्य स्वरूप आत्मा का अनुसरण करके आनन्द का वेदन-अनुभव करना, वह चिन्तामणि रत्न है; अन्य सब तो धूल के रतन हैं। करना हो तो यह एक ही करने योग्य है।

चिन्तामणि अर्थात् एक ऐसा पत्थर होता है कि जो देव अधिष्ठित होता है। पुण्य के कारण जिसके पास वह पत्थर हो, वह जो चिन्तवन करे, वह वस्तु उसे प्राप्त होती है; वह तो जड़ है। यहाँ कहते हैं कि यह आत्मा अपने ज्ञान-आनन्द आदि से भरा हुआ तत्त्व है, उसका अनुभव करना, वह चिन्तामणि रत्न है। पुण्य-पाप से रहित अपनी वस्तु का अनुभव करना, वह चिन्तामणि रत्न है।

करोड़पति अथवा अरबपति सेठिया कहलाते हैं, वे सब पत्थर के भिखारी हैं, सब उन्हें पैसावाले कहकर बुलाते हैं; परन्तु ये कहनेवाले तो पागल हैं। ज्ञान-आनन्द आदि स्वरूप का अनुभव में आना, वह चिन्तामणि रत्न है।

'अनुभव है रसकूप' - भगवान आत्मा शान्ति का सागर है। अविकारी, निर्दोष, शान्तरस का सागर है। उसका अनुभव, वह रस का कुआँ है। जिसके स्वभाव का कोई पार नहीं, अपरिमित है, बेहद है- ऐसी अपार

शान्ति का सागर भगवान आत्मा स्वयं है और उसका अनुभव, वह शान्तरस का कुआँ है।

'अनुभव मारग मोख को'– अनुभव वह मोक्ष का मार्ग है। देखो, यह सीधी बात लिखी है कि अनुभव मोक्ष का मार्ग है। लोग व्यर्थ का विवाद लेकर बैठते हैं कि व्यवहार से निश्चय होता है, शुभराग से धर्म होता है। अरे! दया, दान, व्रत, भक्ति आदि तो वृत्ति का उत्थान है, वह धर्म कैसा ? अनुभव ही धर्म है। यह एक ही मोक्ष का मार्ग है, मोक्ष के मार्ग दो नहीं हैं – ऐसा कहते हैं।

अखण्ड आनन्दस्वरूप आत्मा की अभेद, निर्विकल्प, वीतराग सम्यग्दृष्टि, निर्विकल्प स्वसंवेदन ज्ञान और स्वरूप में स्थिरतारूप आनन्द का भोजन, वह मोक्ष का मार्ग है।

श्रोता:– इसमें व्यवहार साधनरूप तो है न ?

पूज्य गुरुदेवश्री:– अनुभवरूप धर्म का साधन भी अन्दर है, बाहर में कोई व्यवहार साधन नहीं। स्वरूप का साधन करे, तब बाहर में जो राग की मन्दता होती है, उसे उपचार से निमित्तरूप बाह्य साधन कहा जाता है। वास्तविक दृष्टि से व्यवहार कोई साधन नहीं है। जो नहीं उसे कहना, उसका ही नाम व्यवहार है।

क्या हो ? जगत को सत्य मिलता नहीं, अत: धर्म के नाम पर भी विपरीत रास्ते पर चला जाता है। उसमें कहीं से आत्मा हाथ में नहीं आता।

यहाँ तो सीधी और सरल बात है कि आत्मा स्वयं पूर्णानन्द स्वरूप है, उसकी पर्याय में पूर्णानन्द की प्राप्ति होना, वह मोक्ष है और आनन्द का आंशिक वेदन होना अनुभवरूप मोक्ष का मार्ग है। बात तो सीधी है, पर जीव बाहर में ऐसा रच-पच गया है, इतनी पराश्रित बुद्धि हो गई है कि स्वाश्रित अनुभव की बात की हाँ करने में भी उसका पसीना उतरता है।

'अनुभव मोक्षस्वरूप'– जैसा वस्तु का पूर्ण स्वभाव है; वैसा दशा में, पर्याय में उसका पूर्ण अनुभव होना, उसका ही नाम मोक्ष है। मुक्ति के कारणरूप अनुभव का सम्पूर्ण अधिकार कहना है न ! अबन्धस्वभावी भगवान

आत्मा के आश्रय से पर्याय में जो अबन्ध दशा प्रकट होती है, वह मोक्ष का मार्ग है, वह अनुभव है और उसकी पर्याय में पूर्णता हो जाने का नाम मोक्ष है।

अरे ! ऐसा निजघर का रास्ता हाथ न आवे तो बाहर से सिर पछाड़कर मर जाये, काय-क्लेशादि करे; तथापि वस्तु हाथ आवे- ऐसा नहीं है।

अनुभौके रसकौं रसायन कहत जग,
अनुभौं अभ्यास यहु तीरथकी ठौर है।
अनुभौकी जो रसा कहावै सोई पोरसा सु,
अनुभौ अधोरसासौं ऊरधकी दौर है॥
अनुभौकी केलि यहै कामधेनु चित्रावेलि,
अनुभौकौ स्वाद पंच अमृतकौ कौर है।
अनुभौ करम तोरै परमसौं प्रीति जोरै,
अनुभौ समान न धरमकोऊ और है॥19॥

अर्थः- अनुभव के रस को जगत के ज्ञानी लोग रसायन कहते हैं, अनुभव का अभ्यास एक तीर्थभूमि है, अनुभव की भूमि सकल पदार्थों को उपजाने वाली है, अनुभव नर्क से निकालकर स्वर्ग-मोक्ष में ले जाता है, इसका आनन्द कामधेनु और चित्रावेलि के समान है, इसका स्वाद पंचामृत भोजन के समान है। यह कर्मों को क्षय करता है और परम पद से प्रेम जोड़ता है, इसके समान अन्य कोई धर्म नहीं है ।।19।।

नोटः- संसार में पंचामृत, रसायन, कामधेनु, चित्रावेलि आदि सुखदायक पदार्थ प्रसिद्ध हैं, सो इनका दृष्टान्त दिया है परन्तु अनुभव इन सबसे निराला और अनुपम है।

काव्य - 19 पर प्रवचन

अब 19वें काव्य में अनुभव को भिन्न-भिन्न उपमायें देते हैं-

जैसे वनस्पति के जिस रस से लोहा सोना बन जाता है, उसे रसायन कहते हैं; वैसे ही मिथ्यात्व को तोड़कर आनन्द प्राप्त करावे ऐसे अनुभव को जगत के ज्ञानी रसायन कहते हैं।

ज्ञानार्णव के रचयिता शुभचन्द्राचार्य देव के भाई अन्यमत के साधु हो गये। उन्होंने तप करके लोहे से सोना बनाने का ऐसा रसायन प्राप्त किया और उसे मूल्यवान समझकर अपने भाई शुभचन्द्राचार्य के पास भेजा। आचार्यश्री ने तो उसे ढोल दिया और भाई को उलाहना दिया कि अरे भिखारी! क्या इस रसायन के लिए तूने राज्य त्यागा था? रसायन ही चाहिए था तो राज्य में ही रहना था न। अपन ने तो चैतन्य का रसायन प्राप्त करने के लिए राज्य छोड़ा था। ऐसा कहकर पत्थर की शिला पर पेशाब किया तो शिला सोने की हो गई, उसे बताकर कहा कि यहाँ तो पेशाब रसायन का काम करती है, परन्तु उसका क्या करें? आत्मा के अनुभवरूप रसायन के समक्ष इसकी क्या कीमत है?

रसायन तो उसको कहते हैं कि जिससे क्षणमात्र में मिथ्यात्व का नाश होकर आत्मा जागृत हो, आत्मसाक्षात्कार हो उसका नाम अनुभव रसायन है। ज्ञानीजन इस अनुभव को रसायन कहते हैं। जबकि मूढ़जीव लोहे से सोना बनावे उसे रसायन कहते हैं, परन्तु वे तो दोनों धूल हैं, लोहा और सोना दोनो जड़ हैं, उनसे आत्मा को क्या लाभ होता है?

आत्मा ही पवित्र तीर्थभूमि है। जिसने इस पवित्रधाम का अनुभव करके इसमें प्रवेश किया वह तीर्थ के धाम में है, पवित्र भूमि में स्थित है, वह स्वयं पवित्र होकर वहाँ ही ठहर गया है। उसने ही वास्तविक तीर्थयात्रा की है। सम्मेदशिखर जाये या शत्रुंजय जाये; परन्तु वह वास्तविक यात्रा नहीं है। लोग गंगास्थान से पवित्रता मानते हैं; परन्तु गंगा में तो बहुत मछलियाँ नहाती है तो क्या वे सब पवित्र हो गई।

तिरने के उपाय का साधन ऐसा जो भगवान सच्चिदानन्द स्वरूप आत्मा, उसमें जिसने प्रवेश किया, उसने पवित्र तीर्थभूमि में प्रवेश किया है। देखो! यात्रा के शुभभाव को यात्रा नहीं कही। अशुभ से बचने के लिए यात्रा का शुभभाव आवे उसका निषेध नहीं है; परन्तु वह वस्तु का स्वरूप नहीं है। जिसने आत्मा के तीर्थ में प्रवेश किया वह तो तिर गया। उसने अनुभव की पवित्रता प्रगट की; वह तीर्थ में ठहर जाता है। ऐसी तीर्थयात्रा तो पशु भी कर

सकता है, तो मनुष्य गृहस्थाश्रम में रहता हो वह न कर सके यह बात ही कहाँ रही ?

'अनुभव को रसा'– रसा अर्थात् भूमि। निर्विकल्प शुद्ध चैतन्य रसकंद आत्मा की सन्मुखता का जो अनुभव है वह ऐसी भूमि है कि जिसमें सम्यग्दर्शन–सम्यग्ज्ञान–सम्यक् चारित्र –इच्छा निरोध आदि उत्कृष्ट वस्तुयें पकती है।

कितनी ही भूमि ऐसी होती है कि जिसमें चावल पकते हैं, किसी में घास पकती है; वैसे ही यह अनुभव की भूमि ऐसी है कि जिसमें अनन्त ज्ञान, अनन्त आनन्द आदि उत्कृष्ट वस्तुयें ही पकती है। फिर भले ही वह अनुभव करनेवाले का शरीर स्त्री का हो, तिर्यन्च का शरीर हो, नारकी का शरीर हो या देव का शरीर हो; परन्तु उसके अनुभव रस में आनन्द, शान्ति, प्रभुता, स्वच्छता, पवित्रता के पाक पकते हैं।

'अनुभौ अधो रसासौं उरध की दौर है' – निचली भूमिका से उपर ले जाय, नरक में से उपर लाकर मोक्ष में ले जाय ऐसा यह अनुभव है। नरक में भी अनुभव करनेवाले नारकी जीव हैं। सम्यक् अनुभव और अनुभव की शान्ति नरक में भी हो सकती है। अहो! यह आत्मा! अद्भूत..अद्भूत, विस्मय..विस्मय –ऐसे आत्मा का भान होने पर नरक के जीव भी वहाँ से ऊँचा आकर मनुष्य होकर मोक्ष में जाते हैं। ऐसा इस अनुभव का फल है।

श्रेणिकराजा चौरासी हजार वर्ष नरक में रहकर, वहाँ से निकलकर तीर्थंकर होकर मोक्ष जाने वाले हैं; यह सब अनुभव रस के फल का पाक है।

पुण्य के परिणाम तीर्थंकर नामकर्म के योग्य हुए थे उसके फल में समवसरण आदि वैभव होगा; परन्तु केवलज्ञान तो इस आत्मानुभव के फल में ही होना है।

अन्तर में आत्मा परमेश्वरस्वरूप से विराजमान है न! शुद्ध आनन्द और शुद्धज्ञान का सागर..चैतन्य रत्नाकर..चैतन्य का स्वयंभूरमण समुद्र है; उसमें दर्शन, ज्ञान, शान्ति आदि रत्न पकते हैं। वह अनुभव ही जीव को ऊँचा ले जाता है।

अनुभौ की केलि यहै कामधेनु चित्रावेलि– कामधेनु गाय जब चाहे तब दूध देती है। जब इच्छा हो तभी दूध देती है; वैसे ही यह अनुभव भी आनन्द देनेवाली कामधेनु है। आनन्द का दूधपाक घर में पका है। चित्रावेलि अर्थात् इस जाति की वनस्पति कि जिसमें से जो चाहिए वह मिले; यह अनुभव आनन्द की चित्रावेलि है।

पद्मनंदि पंचविंशति में पद्मनंदि मुनिराज कहते हैं कि कामधेनु, चित्रावेलि आदि कहलाती है, वह तो हमने देखी नहीं; परन्तु यह अनुभवरूप कामधेनु तो हमने देखी है। अतीन्द्रिय आनन्द का अनुभव वह हमारी चित्रावेलि और कामधेनु है। एक 'कामकुम्भ' होता है, उसमें से भी जो निकालो, वह निकला करता है, लाखों मनुष्य जीम लें तथापि उसमें से दूधपाक कम न हो; परन्तु यह तो जड़-धूल है। अनुभव तो ऐसा कामकुम्भ है कि आत्मा में से अतीन्द्रिय आनन्द का रस निकला करे..निकला ही करे, कम ही नहीं हो।

परन्तु ऐसे आत्मा के गीत किसी दिन सुने नहीं। अमुक वस्तु बहुत ऊँची, यह बहुत ऊँची ऐसा कहता है, परन्तु यह चीज ऊँची या इसे जाननेवाला ऊँचा ?जाननहार को जाना नहीं और अन्य माथापच्ची का पार नहीं।

अनुभौ कौ स्वाद पंच अमृत को कौर है– अनुभव तो पंच प्रकार के अमृत का भोजन है। कवि उसे कहते हैं कि जो आत्मा के गीत गाये। जो शरीर के गीत गाये; वह कवि नहीं है। शरीर तो सुन्दर दिखता हो, परन्तु जहाँ दो दिन भोजन नहीं करे तो वहाँ यह अनाज का पिण्ड कुम्हला जाता है, अतः इसके गीत क्या गाना ?शरीर तो सड़ता है, अन्दर कीड़े पड़ते हैं; क्योंकि यह तो मिट्टी है न ! हाड़-मांस का पिंजरा है न !

अनुभव, वह पंचामृत भोजन है। लग्न के समय पंचों को जिमाने बैठाते हैं न ! वहाँ ऊँची-ऊँची वस्तुयें भोजन में परोसते हैं, सभी आदमियों को ऐसा नहीं मिलता, वैसे ही जो पंचपरमेष्ठी के साथ जीमने बैठा, उसको पंचामृत

मिलता है। अहा.... हा हा.... । आत्मा के आनन्द के समक्ष पाँच इन्द्रियों के विषय, इन्द्र का इन्द्रासन भी सड़ा हुआ तिनका अथवा कुत्ते के कलेवर जैसे लगते हैं। चिदानन्द के स्वाद के आगे सब धूल...धूल और धूल है।

ऐसे आत्मा की जिसको खबर न हो और कहे कि आत्मा है...है; परन्तु कैसा है आत्मा ? उसे पहचान तो सही। आत्मा के आनन्द का रस चख तो वह तो पंचामृत का भोजन है। ऐसा वीतराग का तत्त्व सुना नहीं और क्रिया करके मर गया है।

अनुभौ करम तौरे– भगवान आनन्दकन्द शुद्ध चैतन्य के अनुभव से कर्म की निर्जरा होती है। उपवास करने से कर्म की निर्जरा नहीं होती। उपवास करते हैं, वह तो लंघन है। अनुभव ही कर्मों को तोड़ता है। थोड़े अनुभव से थोड़ी और पूर्ण अनुभव से पूर्ण निर्जरा होती है।

देखो ! यह थोड़े शब्दों में कितना लिख दिया है। **'परम सौं प्रीति जौरै'**– परम अर्थात् अपना अविनाशी आनन्दकन्द ध्रुव परमात्म स्वरूप। अनुभव से परमात्म स्वरूप के साथ प्रीति होती है और राग तथा पुण्य–पाप की प्रीति छूट जाती है।

स्व चैतन्यप्रभु अपरिमित आनन्द, ज्ञान और शान्ति का सागर है। उसका आश्रय करना, अनुभव करना, वेदन करना, वह कर्मक्षय का कारण है। व्रत, तप, उपवास आदि क्रिया कर्मक्षय का कारण नहीं।

'अनुभौ समान न धरम कोऊ और है'– अनुभव के समान अन्य कोई धर्म नहीं। अखण्डानन्द स्वरूप का अनुभव करना ही धर्म है। कल आया था न ! अनुभव धर्म की जय हो।

प्रभु ! तुम कौन हो ?क्या तुम रागवाले, पुण्यवाले और विकारवाले हो ?वह तेरा स्वरूप है ?ये सब तो जड़ – परवस्तुयें हैं। तू तो आनन्दवाला, ज्ञानवाला, शान्तिवाला, सहजात्मस्वरूप का पिण्ड है; उसका अनुभव कर तो स्वरूप की प्रीति होगी और कर्म क्षय हो जायेंगे। अन्य किसी क्रियाकाण्ड से आत्मा में एकाकार नहीं हुआ जाता या कर्मों की निर्जरा नहीं होती।

क्रमशः

श्री प्रवचनसार, गाथा 99 पर पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामीजी के प्रवचनों का सार

वीतरागी-विज्ञान में ज्ञात होता
— विश्व के ज्ञेय पदार्थों का स्वभाव —

गतांक से आगे

प्रत्येक समय के परिणाम में उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य होता है, उसमें वस्तु वर्त रही है। प्रत्येक द्रव्य में तीन काल के जितने समय हैं, उतने ही परिणाम हैं। जैसे—स्वर्ण के सौ वर्ष लिए जायें तो उन सौ वर्षों में हुई कड़ा, कुण्डल, हार इत्यादि समस्त अवस्थाओं का एक पिण्ड सोना है; उसी प्रकार प्रत्येक द्रव्य तीन काल के समस्त परिणामों का पिण्ड है। वे परिणाम क्रमशः एक के बाद एक होते हैं। तीन काल के समस्त परिणामों का प्रवाह, वह द्रव्य का प्रवाहक्रम है और उस प्रवाहक्रम का एक समय का अंश, सो परिणाम है। तीन काल के जितने समय हैं, उतने ही प्रत्येक द्रव्य के परिणाम हैं। उस प्रत्येक परिणाम में उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य—ऐसे तीन प्रकार सिद्ध किये हैं। अपने-अपने निश्चित् अवसर में प्रत्येक परिणाम उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यवाला है। किसी से किसी के परिणाम का उत्पाद हो या कोई परिणाम आगे-पीछे हो—यह बात तो यहाँ से दूर, कहीं दूर उड़ गयी; कोई परिणाम आगे-पीछे नहीं होते, इस निर्णय में तो सर्वज्ञता निर्णय और ज्ञायक द्रव्य की दृष्टि हो जाती है।

आत्मा में वर्तमान जो ज्ञान अवस्था है, उसे अवस्था में ज्ञानगुण वर्त रहा है, दूसरी अवस्था होगी, तब उसमें भी वर्तमान वर्तेगा और तीसरी अवस्था के समय उसमें भी वर्तमान वर्तेगा। इस प्रकार दूसरी-तीसरी-चौथी सभी अवस्थाओं के प्रवाह का पिण्ड, सो ज्ञानगुण है। ऐसे अनन्त गुणों का पिण्ड, सो द्रव्य है। द्रव्य के प्रतिसमय जो परिणाम होते हैं, वे परिणाम अपनी अपेक्षा से उत्पादरूप हैं, पूर्व के अभाव की अपेक्षा से व्ययरूप हैं, और अखण्ड प्रवाह में वर्तनेवाले अंशरूप से ध्रौव्य हैं। ऐसा उत्पाद-व्यय-

ध्रौव्यवाला परिणाम है, वह प्रत्येक द्रव्य का स्वभाव है; और ऐसे स्वभाव में द्रव्य नित्य प्रवर्तमान है, इसलिए द्रव्य स्वयं भी उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य स्वभाववाला है—ऐसा अनुमोदन करना।

प्रत्येक वस्तु पलटती हुई-नित्य है। यदि वस्तु अकेली 'नित्य' ही हो तो उसमें सुख-दुःख इत्यादि कार्य नहीं हो सकते; और यदि वस्तु एकान्त 'पलटती' ही हो तो वह त्रिकाल स्थायी नहीं रह सकती, दूसरे ही क्षण उसका सर्वथा अभाव हो जाएगा। इसलिए वस्तु अकेली नित्य, या अकेली पलटती नहीं है, किन्तु नित्य स्थायी रहकर प्रतिक्षण पलटती है। इस प्रकार नित्य पलटती हुई वस्तु कहो या 'उत्पाद-व्यय-ध्रौव्ययुक्त सत्' कहो, उसका यह वर्णन है। अल्प से अल्प काल में होनेवाले परिणाम में वर्तता-वर्तता द्रव्य नित्य स्थायी है। उसके प्रत्येक परिणाम में उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यपना है—यह बात हो गयी है और वह द्रव्य स्वयं भी उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यवाला है।—यह बात चल रही है।

समस्त पदार्थ सत् हैं। पदार्थ 'है'—ऐसा कहते ही उसका सत्पना आ जाता है। पदार्थों का सत्पना पहले (78 वीं गाथा में) सिद्ध कर चुके हैं। पदार्थ सत् हैं और सत्, उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यसहित है। कोई भी वस्तु हो, वह वर्तमान-वर्तमानरूप से वर्तती रहेगी न? कहीं भूत या भविष्य में नहीं रहेगी। वस्तु तो वर्तमान में ही वर्तती है और वह प्रत्येक समय का वर्तमान भी यदि उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यवाला न हो तो वस्तु का त्रिकाल परिवर्तनपना सिद्ध नहीं होगा। इसलिए प्रति समय होनेवाले उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यवाले परिणाम में ही वस्तु वर्तती है। जिस प्रकार द्रव्य त्रिकाली सत् है, उसी प्रकार उसके तीनों काल के परिणाम भी प्रत्येक समय का सत् है। प्रत्येक परिणाम को उत्पाद-व्यय-ध्रौव्ययुक्त सत् सिद्ध करके, यहाँ परिणाम में वर्तनेवाले द्रव्य को उत्पाद-व्यय-ध्रौव्ययुक्त सिद्ध करते हैं।

क्रमशः

आत्मधर्म (हिन्दी), वर्ष 7, अंक चार

आत्मार्थी का पहला कर्तव्य—5

भूतार्थस्वभाव के आश्रय से सम्यग्दर्शन

नव तत्त्वों का यथार्थ वर्णन जैनदर्शन के अतिरिक्त अन्यत्र कहीं नहीं हो सकता, उन नव तत्त्वों को पहिचानना, सो जैनदर्शन की श्रद्धा का व्यवहार है। नवों तत्त्व स्वतन्त्र हैं। आत्मा की अवस्था में पृथक्-पृथक् नव तत्त्वों की श्रद्धा न हो, तब तक एकरूप आत्मा की श्रद्धा नहीं होती, और यदि नव तत्त्व की पृथक्-पृथक् श्रद्धा के राग की रुचि में अटके तो भी एकरूप आत्मा की श्रद्धा (सम्यग्दर्शन) नहीं होती।

नव तत्त्वों को कब जाना कहलाता है ? जीव को जीव जाने, उसमें दूसरे को न मिलाए, जीव शरीर की क्रिया करता है, ऐसा न माने; अजीव को अजीव जाने, शरीरादि अजीव हैं, जीव के कारण उस अजीव का अस्तित्व न माने; पुण्य को पुण्यरूप से जाने, पुण्य से धर्म न माने और जड़ की क्रिया से पुण्य न माने; पाप को पापरूप जाने, वह पाप बाह्य क्रिया से होता है - ऐसा न माने; आस्रव का आस्रवरूप से जाने, उन्हें संवर का कारण न माने और पाप बुरा, पुण्य अच्छा - ऐसा भेद परमार्थ से न माने तथा संवरतत्त्व को संवररूप जाने, संवर वह धर्म है, पुण्य से या शरीर की क्रिया से वह संवर नहीं होता किन्तु आत्मस्वभाव की श्रद्धा, ज्ञान, स्थिरता से ही संवर होता है; निर्जरा अर्थात् शुद्धता की वृद्धि और अशुद्धता का नाश, वह निर्जरा बाह्य क्रियाकाण्ड से नहीं होती, किन्तु आत्मा में एकाग्रता से होती है; बन्धतत्त्व को बन्धतत्त्वरूप से जाने, विकार में आत्मा की पर्याय अटके, वह भावबन्धन है, 'वास्तव में कर्म आत्मा को बाँधते हैं और उसे परिभ्रमण कराते हैं' - ऐसा न माने किन्तु जीव अपने विकारभाव से बन्ध और उसी से भटक रहा है - ऐसा समझे। नववां मोक्षतत्त्व है, आत्मा की बिलकुल निर्मलदशा सो मोक्ष है - ऐसा जाने। इस प्रकार जाने तब तो नव तत्त्वों को जाना कहलाये। यह नव तत्त्व हैं, सो अभूतार्थनय का विषय हैं, अवस्थादृष्टि में नव भेद हैं, उनकी प्रतीति करना, सो व्यवहारश्रद्धा है, उससे धर्म की

उत्पत्ति नहीं है किन्तु पुण्य की उत्पत्ति है। इन नव तत्त्वों की पहिचान में, सच्चे देव-गुरु-शास्त्र कौन और मिथ्या देव-गुरु-शास्त्र कौन - उनकी पहिचान भी आ जाती है। यह नव तत्त्वों की श्रद्धा परमार्थ सम्यग्दर्शन नहीं है। नव तत्त्वों को जान लेने के पश्चात् परमार्थ सम्यग्दर्शन कब होता है, यह बात आचार्यदेव इस गाथा में कहते हैं।

'उन नव तत्त्वों में एकत्व प्रगट करनेवाले भूतार्थनय से एकत्व प्राप्त करके, शुद्धनय से स्थापित आत्मा की अनुभूति कि जिसका लक्षण आत्मख्याति है, उसकी प्राप्ति होती है।' इसमें परमार्थ सम्यग्दर्शन की बात है। व्यवहारश्रद्धा में नवतत्त्व की प्रसिद्धि है। किन्तु परमार्थश्रद्धा में तो मात्र भगवान आत्मा की ही प्रसिद्धि है। नव तत्त्व के विकल्प से पार होकर एकरूप ज्ञायकमूर्ति का अनुभव करे, उसने भूतार्थनय से नव तत्त्वों को जाना कहलाये और वही नियम से सम्यग्दर्शन है। ऐसा सम्यग्दर्शन प्रगट किये बिना किसी प्रकार जीव के भवभ्रमण का अंत नहीं आता।

जीव और अजीव मूलतत्त्व हैं और शेष सात तत्त्व उनके निमित्त से उत्पन्न हुई पर्यायें हैं, इस प्रकार कुल नव तत्त्व हैं, वे अभूतार्थनय से हैं। भूतार्थनय से उनमें एकत्व प्रगट करने से ही सम्यग्दर्शन होता है। नव तत्त्वों को सम्यग्दर्शन का विषय कहना, वह व्यवहार का कथन है। वास्तव में सम्यग्दर्शन का विषय भेदरूप नहीं है, किन्तु अभेदरूप ज्ञायक आत्मा ही है। मोक्षशास्त्र में 'तत्त्वार्थ श्रद्धानं सम्यग्दर्शनम्' कहा है, वहाँ भी वास्तव में तो नव का लक्ष छोड़कर एक चैतन्यतत्त्व की ओर उन्मुख हुआ, तभी सच्चा तत्त्वार्थश्रद्धान कहा जाता है। अखण्ड चैतन्यवस्तु का आश्रय करने से भूतार्थनय से एकत्व प्राप्त होता है। जिसमें निमित्त की अपेक्षा नहीं है और भेद का विकल्प नहीं है, ऐसे त्रिकाल शुद्धस्वभाव की ओर उन्मुख होकर अनुभव करने से चैतन्य का एकत्व प्राप्त होता है और उस अनुभव में भगवान आत्मा की प्रसिद्धि होती है, वह सम्यग्दर्शन है। इसके अतिरिक्त देव-गुरु आदि निमित्त से भी सम्यग्दर्शन नहीं होता, दया-पूजा के भावरूप पुण्य से भी सम्यग्दर्शन नहीं होता। नव तत्त्व को बराबर माने, वह भी अभी

तो पुण्य है। जड़ शरीर की क्रिया से आत्मा को धर्म होता है – ऐसा जो माने, उसे तो जीव और अजीवतत्त्व की पृथक्-पृथक् श्रद्धा भी नहीं है। 'भगवान की प्रतिमा के कारण पुण्य होता है अथवा पर जीव बचा, इसलिए पुण्य हुआ और पर जीव मरा, इसलिए पाप हुआ अथवा तो शुभभाव आत्मा को सम्यग्दर्शन प्राप्त करने में सहायक होगा' – ऐसी समस्त मान्यताएँ मिथ्या हैं, ऐसी मान्यतावाले को तो नव तत्त्व में से पुण्यतत्त्व की भी खबर नहीं है। उसे शुद्ध आत्मा का अनुभव नहीं होता। प्रथम सत्समागम से श्रवण-मनन करके नव तत्त्वों को अभूतार्थनय से जाने, तत्पश्चात् उसमें भूतार्थनय से एकत्व प्राप्त कर सकता है और तभी सम्यग्दर्शन होता है। भेद के लक्ष्य से नव तत्त्व की पृथक्-पृथक् श्रद्धा करने में अनेकत्व है, वह परमार्थ सम्यग्दर्शन नहीं है। नव तत्त्व व्यवहारनय का विषय है, उस व्यवहारनय के आश्रय से सम्यग्दर्शन नहीं होता। ऐसा लक्ष्य में लेकर जिसने नव तत्त्वों का ज्ञान करने में भी चैतन्य की रुचि की है, उसको पश्चात् नव तत्त्व के विकल्परहित होकर अभेद आत्मा की प्रतीति करने से निश्चय सम्यग्दर्शन होता है। ऐसा निश्चय सम्यग्दर्शन चौथे गुणस्थान से ही होता है, और वहीं से अपूर्व आत्मधर्म का प्रारम्भ होता है। ऐसे निश्चय सम्यग्दर्शन के बिना चौथा गुणस्थान या धर्म का प्रारम्भ नहीं होता।

यह समझने के लिए सत्समागम से अभ्यास करना चाहिए। प्रथम संसार की तीव्र लोलुपता को कम करके, सत्समागम का समय निकाल कर आत्मस्वभाव का श्रवण-मनन और रुचि किये बिना अन्तरोन्मुख कैसे हो ?

प्रथम नव तत्त्वों का निर्णय किया, उसमें भी जीव तो आ ही जाता है, किन्तु उसमें विकल्प सहित था, इसलिए वह जीवतत्त्व अभूतार्थनय का विषय था और यहाँ सम्यग्दर्शन प्रगट करने के लिए भूतार्थनय से विकल्परहित होकर एक अभेद आत्मा की श्रद्धा करने की बात है। भूतार्थनय के अवलम्बन से शुद्ध आत्मा को लक्ष्य में लिये बिना व्यवहारनय के अवलम्बन में चैतन्य का एकत्व प्रगट करने की शक्ति नहीं है।

क्रमशः

आत्मधर्म (हिन्दी), वर्ष 7, अंक 7

मोक्षतत्त्व का साधन (4)

श्री प्रवचनसार गाथा 273 पर पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामीजी का प्रवचन

अन्तरंग में जगमगाते हुए चैतन्य से भास्कर (तेजस्वी) आत्मतत्त्व के स्वरूप को समस्त बहिरंग तथा अन्तरंग संगति के परित्याग द्वारा विविक्त (भिन्न) किया है और (उससे) अन्त:तत्त्व की वृत्ति (आत्मा की परिणति) स्वरूपगुप्त और सुषुप्तसमान (प्रशान्त) रहने के कारण वे विषयों में किंचित् आसक्ति नहीं करते' – ऐसी दशावाले सफल महिमावन्त शुद्धोपयोगी मुनि भगवन्त उग्र पुरुषार्थ द्वारा मोक्ष की साधना कर रहे हैं, इससे वे ही मोक्षतत्त्व का साधन है – ऐसा जानना। बाह्य में वस्त्रादि का संग नहीं है और अन्तर में राग-द्वेष की वृत्ति का संग नहीं है, शुद्धात्मा के अनुभव में चैतन्यपिण्ड पृथक् अनुभव में आता है और परिणति स्वरूप में स्थिर हो गयी है, इसलिए विषयों में किंचित्मात्र आसक्ति नहीं रही है – ऐसी मुनिदशा, वह मोक्ष का साधन है। इसमें सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र तीनों एकसाथ आ जाते हैं।

272वीं गाथा में श्रमण को 'स्वरूपमंथर' कहा था अर्थात् स्वरूप में ऐसे जम गये हैं कि बाहर निकलने के आलसी हैं। यहाँ 273वीं गाथा में कहते हैं कि शुद्धोपयोगी मुनि के आत्मा की परिणति 'स्वरूपगुप्त और सुषुप्तसमान' है। उनकी परिणति आत्मा में ऐसी लीन हो गयी है कि मानों सो गयी हो। जिस प्रकार निद्रा में पड़े हुए मनुष्य को बाहर का कुछ भान नहीं रहता, उसी प्रकार मुनि की परिणति आत्मस्वरूप में ऐसी सो गयी है – ऐसी लीन हुई है कि बाह्य में कहीं विकल्प भी नहीं उठता। देखो, इसका नाम मोक्ष का साधन है। इस दशा के भान बिना लोग बाह्य क्रियाकाण्ड में और व्रत-तप के शुभराग में मोक्षमार्ग मान रहे हैं, वह यथार्थ नहीं है।

आत्मा का स्वभाव सर्व को जानने का है, इसलिए वह ज्ञातृतत्त्व है और समस्त वस्तुएँ ज्ञेय हैं। पुण्य-पाप—दोनों अशुद्ध हैं, वह मेरा स्वरूप नहीं है। इस प्रकार उसका भी भान करके, मैं तो शुद्ध ज्ञानस्वभाव हूँ – ऐसी

प्रथम श्रद्धा किये बिना मोक्ष का साधन प्रगट नहीं होता। शरीरादि वस्तुएँ मुझसे पर हैं और मेरी अवस्था में होनेवाले पुण्य-पाप दोनों अशुद्धभाव हैं, मेरा मूल स्वभाव शुद्ध चैतन्यरूप है—ऐसी सम्यक्श्रद्धा और सच्चा ज्ञान करने से अंशत: शुद्धता हुई, किन्तु अभी पुण्य-पाप के विकल्प दूर करके स्वरूप में स्थित न हो, तब तक शुद्धोपयोग नहीं होता, स्वरूप में लीन होने से शुद्धोपयोग प्रगट होता है, वही मोक्ष का साधनतत्त्व है।

अज्ञानीजन शुभ उपयोग को मोक्ष का कारण मानते हैं, किन्तु शुभ उपयोग तो पुण्यबन्ध का कारण है, वह मोक्ष का कारण नहीं है। मोक्ष का कारण तो शुद्धोपयोग ही है।

राग-द्वेष रहित ज्ञायक आत्मतत्त्व का निर्णय करके जो उसके अनुभव में लीन हुए हैं, वे मोक्ष के साधक हैं, इसलिए वही मोक्षतत्त्व का साधनतत्त्व है। गृहस्थपने में स्थित आत्मा को आत्मभान प्रगट करके सम्यग्दर्शन-ज्ञानरूप धर्म होता है, परन्तु चारित्रदशा प्रगट हुए बिना उसे मोक्ष का साधन पूर्ण हुआ नहीं कहलाता। श्री भरत चक्रवर्ती अरबों वर्ष तक राजपाट में रहे, उस समय उन्हें अन्तर में आत्मा का भान था। क्षायिक सम्यक्त्व था, किन्तु चारित्रदशा नहीं थी। अस्थिरता के राग-द्वेष थे, इसलिए चारित्रदशा नहीं थी। एक बार दर्पण में देखते समय मुँह पर झुर्रियाँ देखकर वैराग्य उत्पन्न हुआ और राजपाट का राग छोड़कर दीक्षा लेकर मुनि हो गये, उसी समय आत्मा के अनुभव में एकाग्र होने से शुद्धोपयोग चारित्र प्रगट हुआ। ऐसी शुद्धोपयोगी दशा, सो साक्षात् मोक्षमार्ग है। पुण्य और पाप दोनों अशुद्ध भाव हैं-अशुद्ध व्यापार हैं और उस भावरहित आत्मा के स्वरूप में स्थिर होना, वह शुद्धभाव है, शुद्ध व्यापार है, मोक्ष का साधन है।

महिमावन्त शुद्ध उपयोगी मुनिवर अनादि संसार से रचित विकट कर्मपाट को तोड़ने का अति उग्र प्रयत्न द्वारा पराक्रम प्रगट कर रहे हैं, इससे उन मुनि भगवन्तों को मोक्षतत्त्व का साधन तत्त्व जानना। शुद्धोपयोग द्वारा स्वरूप में लीन होनेवाले मुनि अनादि काल के निद्धत और निकाचित कर्मों को भी क्षणभर में तोड़ डालते हैं। जिस प्रकार जमशेदपुर के लोहे के

कारखाने की बड़ी भट्टी में लोहे का गोला भी मोम की भाँति पिघल जाता है, उसी प्रकार यहाँ मुनिवरों ने 'सिद्ध समान सदा पद मेरो'—ऐसा भान करके स्वरूप के ध्यान द्वारा शुद्धोपयोगरूपी अग्नि प्रकट की है, उसमें अनादि काल के निद्धत और निकाचित कर्म भी जलकर भस्म हो जाते हैं। इस प्रकार मुनि अनादि के कर्मकपाट को तोड़ने का अति उग्र प्रयत्न कर रहे हैं, वास्तव में अपनी ज्ञानशक्ति अनादि से संकुचित हैं, उसे केवलज्ञानरूप से प्रगट करने का उग्र प्रयत्न कर रहे हैं, कर्म की बात निमित्त से की है। शुद्धोपयोगी मुनि कर्मकपाट को तोड़ने का जो अति उग्र प्रयत्न कर रहे हैं, वही सच्चा पराक्रम है। मोक्ष के हेतुरूप अति उग्र प्रयत्न को ही यहाँ पराक्रम कहा है। संसार में जो लौकिक पराक्रम है, वह कहीं सच्चा पराक्रम नहीं है। जिस प्रकार बहुत काल से बन्द गुफा के वज्र-कपाटों को चक्रवर्ती तोड़ डालते हैं, उसी प्रकार चैतन्यचक्रवर्ती भगवन्त शुद्धोपयोगी मुनि शुद्धोपयोग द्वारा अनादिकालीन कर्मकपाट को तोड़ने का अति उग्र प्रयत्न कर रहे हैं। मानों केवलज्ञान प्राप्त कर लिया है या करेंगे। इसी को मोक्षतत्त्व का साधनतत्त्व कहा जाता है।

ज्ञानानन्दस्वरूप आत्मा की प्रतीति करके उसमें स्थिर हो तो अनादि से बँधे हुए विकट कर्म भी टूट जाते हैं। कर्म का बल है और कर्म नहीं टूटेगा – ऐसी बात ही नहीं ली है, किन्तु कर्म कपाट को तोड़ने के अति उग्र प्रयत्न द्वारा पराक्रम प्रगट करने की ही बात ली है। जो शुद्धोपयोग द्वारा अनादिकालीन कर्मों को तोड़ने का और केवलज्ञान प्रगट करने का उग्र प्रयत्न कर रहे हैं—ऐसे सकल महिमावन्त भगवन्त शुद्ध उपयोगी मुनि – वह मोक्ष का साधनतत्त्व है। यही एक मोक्ष का साधन है, दूसरा कोई साधन नहीं है।

इस प्रकार 271वीं गाथा में संसारतत्त्व का, 272वीं गाथा में मोक्षतत्त्व का और 273वीं गाथा में मोक्षतत्त्व के साधनतत्त्व का वर्णन किया। अब, श्री आचार्य भगवान मोक्षतत्त्व के साधनतत्त्व का 'सर्व मनोरथ के स्थानरूप' से अभिनन्दन करते हैं, यह बात 274वीं गाथा में आयेगी।

आत्मधर्म (हिन्दी), वर्ष 7, अंक चार

आचार्यदेव परिचय शृंखला

भगवान आचार्यदेव
श्री महावीरदेव

भारतीय गणित के इतिहास में श्री महावीराचार्य का नाम बड़े आदर के साथ लिया जा सकता है। जैन गणित को व्यवस्थितरूप देने का श्रेय आप ही को प्राप्त है।

आपके गणित ग्रन्थ की पाण्डुलिपियों एवं कन्नड़ व तामिल टीकाओं पर से इतिहासकार यह निष्कर्ष निकालते हैं, कि आप मैसूर प्रान्त के किसी कन्नड़ भाग में हुए होंगे।

उस समय सुदूर दक्षिण में गणित-विज्ञान को वृद्धिगत करने का श्रेय आपने प्राप्त किया। जबकि उत्तरीय भारत में ब्रह्मगुप्त और भास्कर के समय में श्री धराचार्य को छोड़कर कोई अन्य प्रकाण्ड गणितज्ञ नहीं हुआ।

आपने पूर्ववर्ती गणितज्ञों के कार्य में पर्याप्त संशोधन व परिवर्द्धन किया था। आपने ही शून्य के विषय में भाग क्रिया करने की प्रणाली का आविष्कार किया। किसी संख्या में शून्य द्वारा विभाजन किये फलों का निरूपण करते हुए बताया, कि संख्या शून्य द्वारा विभाजित होने पर परिवर्तित नहीं होती है। जिस दृष्टिकोण को लेकर यह सिद्धान्त निबद्ध किया है, वह सिद्धान्त स्थूल विभाजन पर आवृत है।

आपने (1) गणितसार संग्रह व (2) ज्योतिषपटल, ये दो ग्रन्थ रचकर जैन गणित को समृद्ध किया है।

आप राजा अमोघवर्ष (प्रथम) के मित्र थे। आप दोनों साथ-साथ रहते थे। पीछे से श्री महावीराचार्य ने भगवती जिनदीक्षा ग्रहण की थी। आपका समय अमोघवर्ष (प्रथम) अनुसार ई.स. 800-830 इतिहासकार वर्णित करते हैं।

आचार्य श्री महावीरदेव भगवन्त को कोटि-कोटि वन्दन।

प्रेरक-प्रसंग

पर-पीड़ा में सहभागी

स्कूल की छुट्टी हुई। एक बालक अपने कन्धे पर थैला लटकाये बाहर आया। उसने देखा—एक नौजवान लड़का एक दुबले लड़के को पीट रहा है। मन में विचार आया कि इस लड़के को बचाना चाहिए, किन्तु बलवान युवक को देखकर साहस न कर सका।

उसने मधुर शब्दों में उस पीटनेवाले युवक से पूछा—'भाईसाहब! आप इस बालक को कितनी बेंत लगाना चाहते हैं?'

पीटनेवाले ने पूछा—'तुम्हारा क्या तात्पर्य है?'

'मुझे एक काम है।' बालक ने कहा।

'क्या काम है तुम्हें?'

'मैं इतना बलवान नहीं हूँ कि इस बालक का पक्ष लेकर आपसे लड़ सकूँ, किन्तु इतना अवश्य कर सकता हूँ कि इसकी पिटाई में हिस्सेदार बन जाऊँ।'

'इसका क्या मतलब है?' पीटनेवाले ने पूछा।

'मेरा तात्पर्य यह है कि आप इस लड़के को जितनी बेंत लगाना चाहते हो, उसकी आधी मेरी पीठ पर लगा दें।'

पीटनेवाला युवक उस साहसी बालक की ओर आश्चर्य-पूर्ण मुद्रा में देखता रहा तथा उसी क्षण उस बेंत को तोड़कर एक ओर फेंक दिया। यह बचानेवाला बालक आगे चलकर अंग्रेजी का सुप्रसिद्ध कवि लॉर्ड वायरन के नाम से विश्रुत हुआ।

शिक्षा - सामने कितना भी बलवान क्यों न हो, पर साहस व समझदारी से स्वयं कष्ट सहकर भी यदि दूसरों का दुःख दूर हो सके तो तैयार रहना चाहिए।

साभार : बोध कथायें

तीर्थधाम मङ्गलायतन में तत्त्व प्रभावना

तीर्थधाम मङ्गलायतन : दिनांक 6 से 12 अक्टूबर 2019 तक टोडरमल स्मारक के वरिष्ठ अध्यापक डॉ. दीपक जैन 'वैद्य' जयपुर द्वारा गोम्मटसार के आधार से जैन अलौकिक गणित एवं जीव समास प्रकरणों पर तथा विदुषी श्रुति जैन द्वारा छहढाला की कक्षा ली गयी। इसी शृंखला में पण्डित कमलेश शास्त्री, ग्वालियर द्वारा मोक्षमार्गप्रकाशक के सातवें अधिकार पर कक्षा ली गयी। सभी मङ्गलार्थियों ने कक्षाओं का उत्साहपूर्वक लाभ लिया।

तीर्थधाम मङ्गलायतन में
इस वर्ष 'मोक्षमार्गप्रकाशक' महोत्सव

तीर्थधाम मङ्गलायतन ने पण्डित टोडरमलजी के 300 वर्ष पूरे होने के उपलक्ष्य में 'मोक्षमार्गप्रकाशक वर्ष' मनाने का निर्णय लिया है। इसी शृंखला में—

— मूल प्रति से मिलान करके मोक्षमार्गप्रकाशक ग्रन्थ छपाया।

— मोक्षमार्गप्रकाशक ग्रन्थ पर प्रारम्भ से स्थानीय विद्वान पण्डित सचिन जैन द्वारा स्वाध्याय कराया जा रहा है, जो लन्दन समाज को और अन्य मुमुक्षु समाज के लिए यू-ट्यूब पर लोड किए जा रहे हैं। अब तक 35 प्रवचन अपलोड कर दिए गए हैं।

— मङ्गलायतन में प्रात:कालीन स्वाध्याय में श्री पवन जैन द्वारा मोक्षमार्ग-प्रकाशक पर ही चर्चा-वार्ता की जा रही है।

— मोक्षमार्गप्रकाशक के नौ अधिकारों की प्रश्नोत्तरमाला का निर्माण जल्द ही किया जाएगा। जो नए स्वाध्यायियों एवं बच्चों के लिए लाभप्रद होगी।

— मोक्षमार्गप्रकाशक ग्रन्थ का एक बार पुन: निरीक्षण श्री पवन जैन और डॉ० सचिन्द्र शास्त्री के द्वारा किया गया है।

— भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन के मङ्गलार्थी छात्रों के पाठ्यक्रम में श्री पवन जैन द्वारा कक्षा 8वीं को, अधिकार - 1, 6; पण्डित सचिनजी द्वारा कक्षा 10वीं को अधिकार - 2, 3, 4; डॉ० सचिन्द्र शास्त्री द्वारा कक्षा 11-12वीं को अधिकार - 7, 8, 9 पढ़ाया जा रहा है।

वैराग्य समाचार

कोटा : श्रीमती रतनबाईजी जैन धर्मपत्नी स्वर्गीय बाबू जुगलकिशोरजी 'युगल' की धर्मपत्नी थीं एवं चिन्मय जैन की मातुश्री थीं। आपका सल्लेखनापूर्वक अत्यन्त शान्त परिणामों से लगभग 90 वर्ष की आयु में देहवियोग हो गया है।

आपके पिछले चार दिनों से शरीर के अंग क्रमश: शिथिल होकर निष्क्रिय होते जा रहे थे। इसलिए पहले तो विशेषज्ञ-चिकित्सकों की देखरेख में अस्पताल में रखा गया, किन्तु उनकी भावना का पूरा सम्मान करते हुए सभी परिजन उन्हें घर ले आये और सभी आवश्यक किन्तु सात्विक उपचार करते हुए उन्हें विधिपूर्वक सल्लेखना दिलवायी।

दिवंगत आत्मा शीघ्र ही मोक्षमार्ग प्रशस्त कर अभ्युदय को प्राप्त हों-ऐसी भावना मङ्गलायतन परिवार व्यक्त करता है।

समाचार-दर्शन

भगवान महावीर निर्वाण महोत्सव एवं आध्यात्मिक शिक्षण शिविर सानन्द सम्पन्न

तीर्थधाम मङ्गलायतन : श्री आदिनाथ कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, अलीगढ़ एवं श्री कुन्दकुन्द प्रवचन प्रसारण संस्थान, उज्जैन के संयुक्त तत्त्वावधान में 24 अक्टूबर से 28 अक्टूबर 2019 तक भगवान महावीर निर्वाण महोत्सव एवं आध्यात्मिक शिक्षण शिविर सानन्द सम्पन्न हुआ।

प्रथम दिन मङ्गल कलश शोभायात्रापूर्वक ध्वजारोहण एवं श्री पंचास्तिकाय संग्रह विधान प्रारम्भ हुआ। विधि-विधान का कार्य पण्डित मनोज जैन, जबलपुर एवं संयोजन पण्डित सुधीर शास्त्री ने किया। प्रतिदिन प्रात: प्रौढ़ कक्षा पण्डित सचिन जैन ने मोक्षमार्गप्रकाशक ग्रन्थ पर ली। विधि-विधान के पश्चात् पूज्य गुरुदेवश्री का वीडियो प्रवचन हुआ। तत्पश्चात् पण्डित विमलदादा झांझरी द्वारा नियमसार एवं पण्डित राजेन्द्र जैन द्वारा समयसार गाथा 143 पर स्वाध्याय कराया गया।

दोपहर काल में मङ्गलार्थी स्वाध्याय के पश्चात् व्याख्यानमाला में डॉ० योगेशजी, अलीगंज; पण्डित अशोक लुहाड़िया, मङ्गलायतन; पण्डित नगेश जैन, पिड़वा; पण्डित मनोज जैन, जबलपुर; पण्डित सचिन जैन, मङ्गलायतन; प्रो. जयन्तीलालजी, मङ्गलायतन विश्वविद्यालय के पश्चात् पण्डित वीरेन्द्र जैन, आगरा का समयसार गाथा 7 पर व्याख्यान हुआ।

रात्रिकालीन कार्यक्रम में जिनेन्द्र भक्ति बाहुबली मन्दिर में सम्पन्न हुई। प्रथम स्वाध्याय पण्डित राजेन्द्र जैन, जबलपुर एवं द्वितीय स्वाध्याय पण्डित वीरेन्द्र जैन, आगरा का हुआ। तत्पश्चात् सांस्कृतिक कार्यक्रम की शृंखला में उज्जैन द्वारा ब्रह्मचारी समताबेन, ज्ञानधाराबेन द्वारा वैराग्यधारा प्रस्तुत की गई। मङ्गलायतन के मङ्गलार्थियों द्वारा महाभारत (पाँच पाण्डव) नाटक की अद्‌भुत प्रस्तुति प्रस्तुत की गयी।

दिनांक 28 अक्टूबर को भगवान महावीर निर्वाण महोत्सव के अवसर पर कृत्रिम कैलाशपर्वत पर, कृत्रिम पावापुरी की रचना बनाकर भगवान महावीर का निर्वाण कल्याणक धूमधाम से मनाया गया। जिसमें शुद्ध दिगम्बर तेरापंथी आम्नाय से निर्मित निर्वाण श्रीफल चढ़ाये गए और निर्वाण का अद्‌भुत दृश्य दिखाया गया।

इस अवसर पर पण्डित विमलदादा झांझरी एवं श्री पवन जैन तथा श्री स्वप्निल जैन ने यह भावना व्यक्त करते हुए कहा कि - यह शिविर निरन्तर दीपावली पर सदा लगाया जाता रहेगा।

उद्घाटन समारोह: दिनांक 24 अक्टूबर को शिविर के उद्घाटन समारोह के अवसर पर आयोजित सभा में मुख्य अतिथि के रूप में श्री जैनबहादुर जैन, कानपुर; श्री अभिषेक जैन, साहिबाबाद; श्री राजेन्द्रकुमार जैन, देहरादून; श्री आदीश जैन, दिल्ली; श्री सुमतप्रकाश जैन, हाथरस; श्री पवन जैन, मङ्गलायतन आदि उपस्थित थे।

शिविर की उद्घाटन सभा की अध्यक्षता श्री अजितप्रसाद जैन दिल्ली द्वारा की गयी। ध्वजारोहण श्री अभिषेक जैन परिवार, साहिबाबाद द्वारा किया गया। श्री पंचास्तिकाय संग्रह विधानकर्ता श्री जैनबहादुर जैन परिवार, कानुपर।

इस अवसर पर पण्डित विमलदादा झांझरी, उज्जैन; पण्डित वीरेन्द्र जैन, आगरा; पण्डित राजेन्द्रकुमार जैन, जबलपुर; डॉ० योगेश जैन, अलीगंज; पण्डित अजित जैन, अलवर; पण्डित नगेश जैन, पिडावा; पण्डित अशोक लुहाड़िया; पण्डित सचिन जैन; प्रो. जयन्तीलाल जैन; पण्डित सचिन्द्र शास्त्री आदि विद्वत्जनों ने ज्ञानगंगा प्रवाहित की।

विमोचन समारोह : भगवान महावीर निर्वाण महोत्सव एवं आध्यात्मिक शिक्षण शिविर के अन्तर्गत दिनांक 25 अक्टूबर 2019 को तीर्थधाम मङ्गलायतन द्वारा प्रकाशित साहित्य के विमोचन समारोह का भव्य आयोजन किया गया।

जिसके अन्तर्गत तीर्थधाम मङ्गलायतन द्वारा प्रथम बार आचार्यकल्प पण्डित टोडरमलजी द्वारा विरचित **मोक्षमार्गप्रकाशक** का विमोचन मंच उपस्थिति सभी अतिथियों एवं विद्वानों द्वारा कराया गया। ग्रन्थ का परिचय एवं प्रकाशन की आवश्यकता के बारे में पण्डित सचिन जैन एवं डॉ. सचिन्द्र शास्त्री द्वारा बताया गया।

पण्डित कैलाशचन्द्र जैन द्वारा संकलित **जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला** के छह भागों का विमोचन हुआ। इन छहों भागों का परिचय श्रीमती बीना जैन, देहरादून द्वारा प्रदान किया गया। उन्होंने बताया कि इन भागों को गुजराती एवं अंग्रेजी भाषा में छपवाया जा रहा है।

इसी अवसर पर तीर्थधाम मङ्गलायतन द्वारा प्राचीन कवियों के भजन-बारह भावना-समाधिमरण पाठ आदि की रंगीन पुस्तक सहित सी.डी. **मङ्गल गीतांजलि** का विमोचन भी किया गया। जिसका परिचय मङ्गलार्थी माइकल यादव ने प्रदान किया। इसी अवसर पर मङ्गल गीतांजलि को तैयार करनेवाले सभी सदस्यों - श्रीमती बीना जैन, देहरादून; श्री दिव्यांश जैन, अलवर; मङ्गलार्थी देवेन्द्र जैन, ग्वालियर; श्रीमती अमी पारेख, राजकोट (परोक्ष); श्री आर.के. सक्सेना, श्रीमती चारु वार्ष्णेय, श्री अमित उपाध्याय, मङ्गलार्थी माइकल यादव, डीपीएस, अलीगढ़ एवं श्री विवेक पाल, तीर्थधाम मङ्गलायतन का सम्मान किया गया।

भगवान महावीर निर्वाण महोत्सव एवं आध्यात्मिक शिक्षण शिविर के अवसर पर
विमोचन समारोह

विमोचन समारोह के समय मंचासीन अतिथिगण

मोक्षमार्गप्रकाशक ग्रन्थ का विमोचन करते अतिथिगण

पण्डित कैलाशचन्द्र जैन द्वारा संकलित 'जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला' के छह भागों का विमोचन करते अतिथिगण

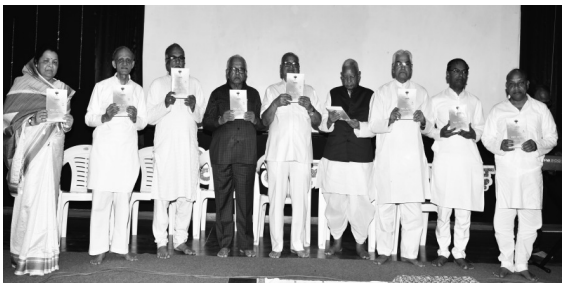

आध्यात्मिक भजनों के संग्रह की सी.डी. 'मङ्गल गीताञ्जलि' का विमोचन करते अतिथिगण

भगवान महावीर निर्वाण महोत्सव एवं आध्यात्मिक शिक्षण शिविर के अवसर पर सम्मान समारोह

श्रद्धांजलि सभा

तीर्थधाम मङ्गलायतन : आज 7 नवम्बर 2019 को प्रात: 8.30 बजे श्रद्धांजलि सभा का आयोजन किया गया। पूज्य गुरुदेवश्री के टेप प्रवचन से सभा का प्रारम्भ हुआ। सर्व प्रथम नौ बार णमोकार मन्त्र पढ़ने के पश्चात् बारह भावनाओं का पाठ किया गया। पवन जैन द्वारा पण्डित वीरेन्द्रजी के जीवन परिचय प्रदान करते हुए बताया कि आप तीर्थधाम मङ्गलायतन से प्रारम्भ से ही जुड़े हुए थे और मङ्गलायतन के निर्देशन में देश-विदेश में होनेवाले शिविरों एवं पंच कल्याणकों में आपने अभूतपूर्व योगदान दिया है। गुरुदेवश्री द्वारा प्रदत्त तत्त्वज्ञान को जन-जन तक पहुँचाने में गुरुवाणी मंथन शिविरों के माध्यम से महती भूमिका रही है।

घटनाक्रम

जबलपुर : (अष्टाह्निका पर्व) आदरणीय पण्डितजी को 06-11-2019 दोपहर में 2.00 बजे सीने व हाथ में दर्द होना चालू हुआ। उन्हें थोड़ी देर में डॉ. राजीव त्रिवेदी को दिखाया, उसने ईसीजी किया और बताया कि पण्डितजी को सीवियर हार्ट अटैक है। आप इन्हें हॉस्पिटल में भर्ती करें व एंजियोग्राफी करायें, उन्होंने नेमा हॉस्पिटल दीनदयाल चौक पर ले जाने को कहा। सुनील भैया, अभिषेक के साथ लगभग 3.00 बजे वहाँ पहुँच गए और भर्ती करके एंजियोग्राफी करने कहा लगभग 4.00 बजे एंजियोग्राफी हुई। ग्राफी में एक 100 परसेंट और दूसरी पचासी परसेंट ब्लॉक बताया। 5.30 बजे एंजोप्लास्टिक करने के लिये ले गये एंजोप्लास्टिक करने के दौरान ही डॉक्टर ने बाहर आकर बताया कि स्थिति ठीक नहीं है, उनका ब्लड प्रेशर बिल्कुल डाउन हो गया है और हम लोग कोशिश कर रहे हैं। हमने अलीगढ़ फोन करके पवनजी साहब से बात की, स्थिति बतायी। उन्होंने डॉक्टर साहब को निर्देश दिए। उस अनुसार बहुत प्रयास करने के बाद भी अन्त में डॉ. ने 10.00 बजे के लगभग जवाब दे दिया कि अब पण्डितजी साहब नहीं रहे। लगभग 50 भाई-बहिन हॉस्पिटल में उनकी स्वास्थ्य की कामना के लिए उपस्थित रहे परन्तु कुछ भी न कर सके और देखते ही देखते पण्डितजी साहब सदा के लिए हम सबसे जुदा हो गए।

जबलपुर में इस प्रकार उनके वियोग से मण्डल को बहुत बड़े सदमे को बर्दाश्त

करना पड़ा है। लगभग 11.30 बजे हम सब एम्बुलेंस करके आगरा रवाना हो गए। बहनजी को अलका व राजीव के साथ सागर से उत्कल ट्रेन से रवाना किया। लगभग 8.00 बजे उनके पुत्र विनयजी से लखनऊ सम्पर्क हो पाया, उनको पण्डितजी के स्वास्थ्य की जानकारी दी। वे जबलपुर आने की तैयारी कर रहे थे। उनको 10.00 बजे उनके पण्डितजी के वियोग की जानकारी दी।

थोड़ी ही देर में पूरे देश के मण्डलों में व्हाट्सएप के द्वारा पण्डितजी के देवयोग की खबर फैल गयी और सभी जगह से सांत्वना के फोन व समाचार होने लगे। पण्डितजी साहब देश के उच्च कोटि के जिनवाणी प्रवक्ता थे, उनके वियोग से हम सब बहुत दु:खी हैं और वे शीघ्र अभ्युदय को प्राप्त हों ऐसी हम कामना करते हैं।

अशोक जैन, जबलपुर

पुरुषार्थी का आत्मबल

कल दोपहर में आदरणीय पण्डितजी की अस्वस्थता के दौरान मैं जब उनके पास गया तो उनके आत्मबल और तत्त्व निर्णय को देखा तो वास्तव में लगा कि जब जीव स्व लक्ष्य से जिनवाणी को आत्मसात् करता है तो उस जीव का निर्णय भी मजबूत होता है। उन्होंने मुझसे बोला कि जो भी स्थिति है आप मुझे स्पष्ट बता दें, मैं कहीं से कमजोर नहीं हूँ, शरीर का परिणमन शरीर में हो रहा है, इससे मैं कमजोर नहीं होता। मैंने उनसे बोला कि कुछ भोजन पानी लेना है तो उन्होंने बोला कि मुझे कोई भी विकल्प नहीं है। इसके बाद बोले, कर्म का उदय कैसी भी स्थिति होवे, मुझे गुरुदेवश्री की वाणी सुनाना, बोले मैं मोबाइल भी इसलिए लेकर आया था कि कुछ भी हो मैं गुरुदेव की वाणी का लाभ ले सकूँ। और उनकी भावना के अनुसार हमारे साधर्मी उन्हें अन्तिम समय तक सम्बोधन करते रहे, अरिहन्त सिद्ध-अरिहन्त सिद्ध सुनते-सुनते उन्होंने हमारे बीच से अन्तिम विदाई ले ली।

06 नवम्बर 2019 की प्रात: श्री समयसार गाथा 8 पर हुए प्रवचन में आपके अन्तिम रिकार्डेड शब्द यही थे — **जितना समय बचे उस समय का सदुपयोग इस तत्त्व विचार में लगाओ, बिना इसके काम चलेगा नहीं... हम सब इस जीवत्व शक्ति के धरनेवाले अपने भगवान आत्मा का दर्शन करें, अनुभव करें इस मंगल भावना के साथ...**

हम सब साधर्मी भी आपके जीवन से प्रेरणा पाकर इस सत् तत्त्व को आत्मसात् करें। इसी अभिलाषा सहित आपको श्रद्धा सुमन अर्पित करते हैं।

— अशोक जैन, जबलपुर

भावभीनी श्रद्धांजलि

दिल्ली: विलक्षण मधुर, सरल वाणी से जिनवाणी का रसास्वादन करानेवाले, गुरुवाणी मन्थन शिविरों में महती भूमिका निर्वाह करनेवाले, बहुत ही सहज-सरल वात्सल्यमयी व्यक्तित्व के धनी आदरणीय पण्डितजी साहब का वियोग पूज्य गुरुदेवश्री के प्रभावना रथ में एक बहुत बड़ी क्षति है। **- अजितप्रसाद जैन**

वडोदरा : आदरणीय वीरेन्द्रजी आगरा का अचानक देह विलय एक बहुत ही दु:खद घटना है। जबकि हम सब यह जानते हैं कि प्रत्येक घटना स्व समय में ही होती है परन्तु जब ऐसा वियोग होता है, तब यहीं बात मानना मुश्किल पड़ता है। पूज्य गुरुदेवश्री द्वारा उद्घाटित तत्त्वज्ञान को अत्यन्त सरल शैली में, शान्त भाव से, करुणापूर्वक परन्तु दृढ़तापूर्वक समझानेवाले एक महान व्यक्तित्व का अस्त हो गया।

आदरणीय पवनजी भाईसाहब (तीर्थधाम मङ्गलायतन) के माध्यम से मुझे जिन विद्वानों का परिचय व सम्पर्क हुआ उनमें आदरणीय वीरेन्द्रजी एक प्रमुख था। अत्यन्त सहज भाव से व वात्सल्य से मिलनेवाली और एक व्यक्ति यह क्षणिक पर्याय छोड़कर हमें शोकाकुल कर गई। **- अजित जैन**

स्मृति शेष.....

गुरुवाणी के व्याख्याकार, प्रिय भाई वीरेन्द्रकुमार।
छोड़ गये नश्वर पर्याय, शरण गही शासन सुखदाय॥
किया जिनागम का अभ्यास, 'मैं ज्ञायक हूँ' दृढ़ विश्वास।
प्रखर प्रवक्ता मधुर वचन, करते गुरुवाणी मंथन॥
देव शास्त्र गुरु शरणा पाय, रत्नत्रय निधियां प्रगटाय।
जन्म मरण का हो अवसान, परिणति में प्रगटे भगवान॥
आत्मार्थीजन के आधार, बने रहेंगे ज्ञेयाकार।
प्राप्त हुई नूतन पर्याय, शुभकामना करो स्वीकार॥
सफल किया नरजन्म यह, शोधा श्रुत का सार।
मोक्षमहल में राजिये, प्रिय वीरेन्द्रकुमार।

- पण्डित अभयकुमार जैन, देवलाली

तीर्थधाम मङ्गलायतन में
भगवान महावीर निर्वाण महोत्सव

प्रकाशन तिथि - 14 नवम्बर 2019 पोस्ट प्रेषण तिथि - 16-18 नवम्बर 2019
Regn. No. : DELBIL / 2001/4685 Postal regn. No. : A.L.G. / 29 / 2018-20

अद्‌भुत अन्तरङ्ग-बाह्य दशा

वस्तुतः यह अन्तरङ्ग दशा अद्‌भुत है। अन्तर में ज्ञायकस्वभाव के उग्र अवलम्बन से कषाय की तीन चौकड़ी का अभाव होने से अन्दर परिणति में तो सुख तथा शान्ति की धारा अत्यन्त वृद्धिङ्गत हो गयी है किन्तु बाहर में शरीर के दर्शन में भी उपशमरस का प्रवाह बहता होता है। मुनिराज के शरीर का दिखाव ही शान्त...शान्त...शान्त... होता है। मानो संसार से एकदम मर गये हों - ऐसा सहज बन गया है।

(वचनामृत प्रवचन, भाग 4, पृष्ठ 196)

पं. सं. : DELBIL/2001/4685
स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक पवन जैन द्वारा **मङ्गलायतन** मुद्रणालय, आगरा रोड, अलीगढ़-202001 छपवाकर, 'विमलांचल', हरिनगर, अलीगढ़-202001 से प्रकाशित। सम्पादक : डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, मङ्गलायतन।

मङ्गलायतन
श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, हरिनगर, आगरारोड, अलीगढ़-202001 (उ.प्र.)
Shri Adinath-Kundkund-Kahan Digamber Jain Trust
Harinagar, Agra Road, Aligarh-202001 (U.P.)
Ph. : 9997996346, 2410010/10; Fax : 2410019/22
info@mangalayatan.com www.mangalayatan.com